# कक्षा में 'कन्यादान' कविता के हिस्सों को पढ़ना

शचीन्द्र आर्य

कक्षाओं में कविताओं का पढ़ाया जाना किसी चुनौती से कम नहीं। ख़ासकर बड़ी कक्षाओं में, जहाँ बच्चों के पास बहुत अलग-अलग सन्दर्भ होते हैं और धारणाएँ व मान्यताएँ भी। ऐसे में कविता में आए पात्र, शब्द, मूल्य और वक्तव्य बच्चों के बीच जिन छवियों का निर्माण करते हैं उनसे शिक्षक को उसके अर्थ निर्माण में मदद तो मिलती है लेकिन यह इतना विविध होता है कि उसे समेटना आसान नहीं। कविता के लेखक का सन्दर्भ और आज के बच्चों का सन्दर्भ कई बार बहुत अलग-अलग होता है। लेकिन यह प्रक्रिया कक्षा में चर्चा के मौक़े देती है। बच्चों के अनुभवों को उभरने के मौक़े देती है। प्रस्तुत आलेख एक ऐसी ही कक्षा का अनुभव दस्तावेज़ है। सं.

## पूर्वपीठिका

कोई भी रचना, अपने-आप में एक ही 'अर्थ' को पाठक के सामने खोले, ऐसा कभी नहीं होता। हमारे निजी अनुभव भी उस 'पाठ' को हमारे अन्दर बनाते हैं। यहाँ 'पाठ' का अर्थ, पाठक द्वारा किसी रचना को पढ़कर उसका 'अर्थ' निर्मित करना है। यह पाठक की अपनी समझ और कौशल पर निर्भर है कि वह उसके किन सन्दर्भों को अपने अर्थ निर्माण के लिए महत्त्वपूर्ण समझे और किनको छोड़ दे। यह पूरी प्रक्रिया और अर्थ की प्राप्ति ही ऐसे अलग-अलग 'पाठ' को बनाते हैं। एक पाठक से इतर दूसरे पाठक तक जाते ही कोई रचना एक ही अर्थ को सम्प्रेषित करे, ऐसा नहीं है। इसके बावजूद, उस रचना का एक ऐसा अर्थ या पाठ ज़रूर होता है कि आप उसमें अन्तर्निहित संवेदना या भाव तक ज़रूर पहुँचते हैं।

हम यहाँ भाषा की पाठ्यपुस्तक से एक कविता के सम्बन्ध में चर्चा करने वाले हैं। इस चर्चा के केन्द्र में कक्षा 10, हिन्दी के लिए एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तक, *क्षितिज* भाग-दो में सम्मिलित की गई कवि ऋतुराज (जन्म : 1940) की कविता 'कन्यादान' है।

## अर्थ निर्धारण का प्रयास

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति द्वारा जब कक्षा 10 के विद्यार्थियों के लिए कविता का चयन

किया गया होगा, तब उसके सदस्य इस 'अर्थ' पर आम राय बनाने में ज़रूर सहमत होंगे कि यह रचना, स्त्री-जीवन के रूढ़िवादी स्वरूप को उनके सामने प्रकाशित करेगी, जिसमें विवाह के बाद पति के घर (या ससुराल) जाना उसके जीवन में आमूलचूल परिवर्तनों का निर्णायक कारक बनता है। पाठ्यपुस्तक में 'कन्यादान' कविता के रचयिता ऋतुराज के जीवन परिचय के बाद कविता को पढ़ने से पहले उसके बारे में कुछ संकेत किए गए हैं, जिनमें कहा गया है कि :

चित्र : हीरा धुर्वे

*"कन्यादान कविता में माँ बेटी को स्त्री के परम्परागत 'आदर्श' रूप से हटकर सीख दे रही है। कवि का मानना है कि समाज-व्यवस्था द्वारा स्त्रियों के लिए आचरण सम्बन्धी जो प्रतिमान गढ़ लिए जाते हैं वे आदर्श के मुलम्मे में बन्धन होते हैं। 'कोमलता' के गौरव में 'कमज़ोरी' का उपहास छिपा रहता है। लड़की जैसा न दिखाई देने में इसी आदर्शीकरण का प्रतिकार है। बेटी माँ के सबसे निकट और उसके सुख-दुख की साथी होती है। इसी कारण उसे अन्तिम पूँजी कहा गया है। कविता में कोरी भावुकता नहीं बल्कि माँ के संचित दुखों की पीड़ा की प्रामाणिक अभिव्यक्ति है। इस छोटी-सी कविता में स्त्री-जीवन के प्रति ऋतुराजजी की गहरी संवेदनशीलता अभिव्यक्त हुई है" (2020: 49)।*

कविता को पढ़ने से पहले, कविता के बारे में कहा गया यह पूर्व कथन विद्यार्थियों और अध्यापक के लिए कविता का परिप्रेक्ष्य या भूमिका बनाने में कितना मददगार होता है, यह कहना कक्षा में जाए बिना सम्भव नहीं है। इस पूर्व कथन को एक विशेष दिशा की तरफ़ ले जाने की एक कोशिश के रूप में देखा जाना चाहिए। यह भूमिका 'संकेत' के रूप में कक्षा के भीतर हमेशा उपस्थित हो, यह ज़रूरी नहीं है लेकिन यह उस एक प्रमुख अर्थ की तरफ़ ले जाने की एक कोशिश ज़रूर लगती है, जो इस कविता के चयन को आधार प्रदान करता है। इसे पाठ्यपुस्तक की सीमा के रूप में रेखांकित करना उचित है कि कविता को पढ़े बिना उसके परिचय में ऐसी बातें कही जा रही हैं, जो अर्थ निर्माण में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। लेकिन ऐसा नहीं है कि विद्यार्थियों और अध्यापक के बीच कक्षा में होने वाली अन्तर्क्रिया में यह ऐसे ही घटित हो और उसी दिए गए अर्थ की तरफ़ जाए।

एक अध्यापक होने से पहले ख़ुद को अगर एक पाठक के तौर पर देखता हूँ, तब यह कविता, पहली मर्तबा पढ़ने से लेकर आज तक मुझे अपनी तरफ़ खींचती है। जिस तरह से समाज लड़कियों को देखने का अभ्यस्त है, उसके उलट यह पंक्तियाँ अपनी तरफ़ खींचती हैं। पहले-पहल मुझे 'लड़की होना पर लड़की जैसी दिखाई न देना' पंक्ति में 'जालपा' की झलक दिखाई देती थी। 'जालपा' प्रेमचंद के उपन्यास *ग़बन* में अपने पति से आभूषणों और गहनों की लालसा प्रकट करती है। उसका पति जहाँ काम करता है, वहाँ ग़बन हो जाता है और बड़े ही नाटकीय अन्दाज़ में वह कहीं चला जाता है और ग़ायब हो जाता है। यह कविता कम-से-कम अपने भीतर ऐसी जगह बनाती है, जिसमें माँ अपनी बेटी से संवाद करती है और

उसे लड़कियों के बने साँचे से बाहर निकलने के लिए कहती है। फिर जब कभी 'आग' के सन्दर्भ को देखता हूँ, वह मुझे कृष्ण कुमार की किताब *विचार का डर* से सती 'रूप कँवर' पर लिखे लेख की तरफ़ ले जाती है। इस फ़ेहरिस्त में *सूरज का सातवाँ घोड़ा* उपन्यास की 'जमुना' भी आ जाती है, जिसका विवाह एक दोहजू (जिस पुरुष की पत्नी की मृत्यु हो जाए) से हो जाता है। थोड़ी देर ठहरकर अगर इन सभी चरित्रों पर ग़ौर करूँ, तब यह कविता के बाहर छिटके हुए सन्दर्भ लगने लगते हैं, जिन्हें पहले किसी रचना में पढ़ लेने के बाद वह दिमाग़ में रह गए हैं। इसे ऐसे भी कहा जा सकता है कि किसी कृतिकार द्वारा रची गई एक दुनिया के समानान्तर दूसरी रचनाओं में आए चरित्र अपनी जगह बना लेते हैं, जिनमें असल ज़िन्दगी के हवालों का सिरे से अभाव है। यह कमी दरअसल मेरे साहित्यिक मन की है। बहरहाल।

## कक्षा में कविता

इस कविता को हर साल कक्षा में विद्यार्थियों के साथ पढ़ना अपने-आप में बहुत मानीखेज है। इसे देखने के लिए हम कक्षा में इस कविता को पढ़ते हुए कुछ कक्षा अनुभवों पर दृष्टि डालेंगे। हिन्दी के अध्यापक के रूप में मेरे पास जो कक्षाएँ हैं, उनमें लड़के और लड़कियाँ दोनों हैं। कविता को कक्षा में बच्चों के साथ पढ़ते हुए बहुत रोचक दृष्टिकोण सामने आते हैं। उनपर जाने से पहले बॉक्स में लिखी इस कविता को पढ़ लेना उचित होगा।

### कन्यादान

*कितना प्रामाणिक था उसका दुख*
*लड़की को दान में देते वक़्त*
*जैसे वही उसकी अन्तिम पूँजी हो*

*लड़की अभी सयानी नहीं थी*
*अभी इतनी भोली सरल थी*
*कि उसे सुख का आभास तो होता था*
*लेकिन दुख बाँचना नहीं आता था*
*पाठिका थी वह धुँधले प्रकाश की*
*कुछ तुकों और कुछ लयबद्ध पंक्तियों की*

*माँ ने कहा पानी में झाँककर*
*अपने चेहरे पर मत रीझना*
*आग रोटियाँ सेंकने के लिए है*
*जलने के लिए नहीं*
*वस्त्र और आभूषण शाब्दिक भ्रमों की तरह*
*बन्धन हैं स्त्री जीवन के*

*माँ ने कहा लड़की होना*
*पर लड़की जैसी दिखाई मत देना।*

जब कक्षा में विद्यार्थी इस कविता को पढ़ते हैं, तब हर साल उनसे इस प्रश्न पर बात शुरू होती है कि कवि ऋतुराज ने यह कविता कब लिखी होगी? क्या इसमें जो यह 'लड़की' है, वह उनकी बहन, बुआ, बेटी है? यह कविता उन्होंने उसकी शादी के बाद, विदाई के अनुभव से गुज़रने के बाद लिखी होगी?

साहित्यिक शब्दावली में क्या यह उनका 'भोगा हुआ यथार्थ' है या वह अपने आसपास कहीं से देखे हुए अनुभव से उपजी भावुक बात को कह रहे हैं? कक्षा में अध्यापक और विद्यार्थियों के लिए इन प्रश्नों से किसी उत्तर तक पहुँचने की कोई ज़रूरत नहीं है। यह कल्पना के ज़रिए उत्तरों के रिक्त स्थानों को सम्भावनाओं से भरना है। इस रिक्तता और अवकाश में रचना प्रक्रिया पर बात हो सकती है।

कक्षा में छात्राओं के लिए यह बहुत ही कठिन अनुभव है कि वह अपनी बड़ी बहन के विवाह के बाद के क्षणों को कवि की तरह लिखने का प्रयास करें। इतना ही नहीं, उनके अनुसार लड़की की विदाई घर के पुरुषों के लिए भी बहुत द्रवित कर देने वाला क्षण होता है। उनके पिता, भाई और मामा आदि के लिए इस क्षण को याद करना भी भावुक कर जाता है। विद्यार्थियों के अनुसार, जिसमें छात्र और छात्राएँ दोनों सहमत थे, कवि ने ऐसी किसी घटना को याद करते हुए उस क्षण के बीत जाने के बाद ही यह कविता लिखी होगी।

एक सत्र में इस कविता को विद्यार्थियों के साथ पढ़ते हुए ऐसा अवसर आया, जब एक छात्रा ने इस बात को बहुत सलीक़े से कहा कि कविता पढ़ते हुए उसे दुख का अनुभव नहीं हुआ। उसे दुख इस बात से हुआ कि कविता को पढ़ते वक़्त, उसे अपनी बड़ी बहन की विदाई याद आ गई। घर में सब कितना रो रहे थे! यही वह बिन्दु है, जिसपर ग़ौर किया जाना चाहिए। कवि जिस विदाई के क्षण को कह रहा है, वह तो पहले से हमारे अन्दर है। इस विदाई के अवसर पर होने वाला यह दुख भी पहले से हमारे भीतर मौजूद है। यहाँ कविता कक्षा के विद्यार्थियों को अपने अनुभवों की तरफ़ ले जाती है। वह अपने निजी क्षणों को कविता में दिए गए कथ्य से मिला रहे हैं। छात्रा द्वारा कही गई बात रस की निष्पत्ति की ओर संकेत कर रही है। फ़िलहाल उस विस्तार में न जाते हुए आगे बढ़ते हैं।

छात्राएँ कविता में 'सयानी' शब्द को बहुत बारीक़ी से देखती हैं और कहती हैं, "सरजी! उस लड़की की उम्र क्या हमसे भी छोटी थी?" दूसरी छात्रा ने पूछा, "क्या यह 'बाल विवाह' था सरजी?" इसपर कक्षा के एक छात्र ने पूछा, "तब कवि ने उन्हें रोका क्यों नहीं सर? हम होते तो ज़रूर पुलिस को बता देते।" विद्यार्थी 'कम सयानी' का जो अर्थ ले रहे हैं, वह है उसका समझदार न होना या कम समझदार होना। वह तो यह बात बल देकर कहते हैं, जब वह सयानी नहीं है तब अपनी माँ द्वारा बताई जा रही इतनी बड़ी-बड़ी बातें कैसे समझ पाएगी? कुछ तो ऐसे भी विद्यार्थी होते हैं, जो कहते हैं, "हम भी नहीं समझ पा रहे सरजी! 'लड़की तो लड़की की तरह ही दिखेगी, वह लड़की की तरह नज़र नहीं आए', कैसे?"

इस अन्तिम प्रश्न पर हर बार बहुत देर ठहरकर सोचने की ज़रूरत महसूस होती है। कवि ने कितने साल पहले यह कविता लिखी, इसका कोई अन्दाज़ा एक अध्यापक के तौर पर मुझे नहीं है। लेकिन जब यह कविता आज कक्षा में विद्यार्थियों के सामने आती है, तब वह संचार माध्यम से घिरी हुई दुनिया में बड़े हो रहे हैं। उनके पास बहुत सारे स्रोत हैं, जिसने उनके अनुभव संसार को विस्तार दिया है। टेलीविज़न अब बहुत पीछे छूट गया माध्यम है। स्मार्टफ़ोन ने इस दुनिया को बहुत बड़ा कर दिया है। वह कहते हैं, जितने भी धारावाहिक हैं, उनमें तो बहुएँ गहनों में लदी होती हैं। कितना सारा तो 'मेकअप' वह करे रहती हैं। बॉलीवुड की बम्बईया फ़िल्मों को चमक-दमक के साथ देखते हैं। कितने सारे सौन्दर्य प्रसाधन विज्ञापन की शक्ल में बाज़ार में मौजूद हैं। लड़कियों के अलावा अब तो लड़कों के लिए भी कितने सारे उत्पाद बड़ी कम्पनियाँ बनाने लगी हैं। तो क्या इतना कहना पर्याप्त होगा कि कवि जिस तरह की लड़की बनने का प्रस्ताव दे रहे हैं, वह आज के लड़कों के लिए भी उतना आसान नहीं रह गया है। किशोरावस्था से गुज़र रहे विद्यार्थियों के लिए इस बात को कैसे समझाया जाए, यह सवाल एक चुनौती की तरह एक अध्यापक के रूप में मेरे सामने आता है।

## अध्यापक की हैसियत से क्या कर सकते हैं हम ?

उनके लिए तो यह शब्द भी बहुत आपत्तिजनक है कि 'दान' तो हम ख़रीदी हुई चीज़ों का कर सकते हैं, एक जीती-जागती लड़की को कोई कैसे 'दान' कर सकता है?

मेरी दृष्टि में इस सवाल के आने के बाद यह कविता उसी रूढ़िवादी छवि को पुष्ट करती हुई प्रतीत होती है। कविता का परिचय जो कविता के पहले पाठ्यपुस्तक में दिया गया है, वह भले इस कविता को एक रूढ़िवादी समाज की परतों की ओर इंगित करता है लेकिन 'कन्यादान' शब्द उसे परोक्ष रूप से उस ओर ले जाता है। कविता में लड़की को 'अन्तिम पूँजी' कहकर कवि द्वारा 'कम सयानी' लड़की को 'पण्य' या ख़रीदे और बेचे जाने योग्य वस्तु में बदल देना नहीं है?

हर साल इस कविता को पढ़ाते हुए यह बात विद्यार्थियों की तरफ़ से मेरे सामने आती है कि भले यह विदाई का पल हो, पर यह कैसी माता है, जो इस भावुक क्षण में 'रूप', 'गहने' और 'आग' जैसी चीज़ों के बारे में अपनी बेटी को चेता रही है? क्या उसे पहले कभी ऐसी बातों के लिए समय नहीं मिला? कभी-कभी कक्षा में ही इस प्रश्न का यह उत्तर आ जाता है, "पहले भी बताई होंगी, पर इस वक़्त वह उसे दोबारा से याद करवा रही है।" इसपर दूसरे छात्रों की प्रतिक्रिया देखने को मिलती हैं, "... तो क्या सर, उसकी माता ही सारी बातें बताएँगी, उसके पिता कहाँ हैं, वह कुछ नहीं कहेंगे...?"

यह चर्चा के दौरान एक और महत्त्वपूर्ण बिन्दु है, जिसमें कविता के ज़रिए कवि रूढ़िवादी समाज की आलोचना करते हुए भी उसी रूढ़िवादी समाज की जेंडर भूमिकाओं को पुष्ट करते हुए लगते हैं। विद्यार्थियों का यह अवलोकन बिलकुल सटीक है, जहाँ वह पिता की अनुपस्थिति को चिह्नित करते हैं। प्रश्न है, विदाई के समय लड़की के पिता कहाँ हैं? इसका कोई एक उत्तर नहीं हो सकता। वह कहीं शामियाने वाले और हलवाई के पैसों का हिसाब बाद में भी कर सकते थे। यह सम्भावना विद्यार्थी प्रकट करते हैं। एक बार एक छात्रा ने कहा, "वह सबके सामने रोते हुए दिखना नहीं चाहते होंगे। सबके सामने वह रोते हुए कैसे लगते? इसलिए वह किसी कमरे में बैठे सुबक रहे होंगे।" कई विद्यार्थी इसपर सहमत भी हो जाएँ, पर कवि ने इस कविता में जो स्थान लड़की की माँ को दिया उतना लड़की के पिता को नहीं मिला।

इस विदाई पर कई छात्र तो इस ओर भी संकेत करते हैं, "क्या ऐसा कहना ठीक है, कि लड़कियाँ ही अपनी माता के ज़्यादा निकट होती हैं, बेटे नहीं हो सकते क्या सरजी?" विद्यार्थियों के प्रश्नों की सहायता से देखते हुए यही लगता है कि कविता में पिता की ग़ैर-मौजूदगी समाज में व्याप्त जेंडर भूमिकाओं का पुनरुत्पादन अधिक है। वह मूल्य जो कविता सम्प्रेषित कर रही है, उसमें विद्यार्थी अपने अर्थ भर रहे हैं। उनके कविता के इस 'पाठ' या 'अर्थ प्राप्ति' को नज़रअन्दाज़ नहीं किया जा सकता है। आपको कक्षा में रहते हुए उनके प्रश्नों का जवाब देना है, और एक क्षण ऐसा आता है जब अध्यापक के तौर पर हमें यह मानना पड़ता है कि कविता इस ओर भी जा रही है।

चित्र : हीरा धुर्वे

कक्षा में इतनी सारी बातों के बाद, जब हम लोग कविता की पंक्तियों को इतना उधेड़ चुके होते हैं कि प्रश्न अभ्यास पर नज़र डालने से लगता है, यह भी उसी एक प्रचलित पाठ की तरफ़ ले जाना

चित्र : हीरा धुर्वे

चाहता है, जिसे पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति ने कविता के परिचय में बाँध दिया है। प्रश्न अभ्यास से गुज़रना ऐसा लगता है, मानो पूरी प्रक्रिया रूढ़िवादी समाज की छवि को बहुत रूढ़ हो चुके बिम्ब, प्रतीक और भाषा से बाँधती है– विदाई, रूप-सौन्दर्य, दहेज, आग में जल जाने वाली बहुएँ। ऐसा नहीं है कि कविता केवल इतनी बात करती है। इसमें इनके अलावा भी बहुत सारे प्रस्थान बिन्दु हैं, जिनको लाए बिना यह कविता की अधूरी समझ को पोषित करेगी। इसी वजह से हर बीतते साल जब यह कविता कक्षा में आती है, तब-तब यह एहसास होता है कि इस कविता को पढ़ाना कितना मुश्किल काम है। कितने सारे अर्थों और पाठों को अपने अन्दर से बाहर निकालती यह कविता इसलिए भी मुझे बेहद पसन्द है। हर सत्र में इसका इन्तज़ार करता हूँ, कब इसकी बारी आएगी और इस बार के विद्यार्थी इसे किस तरह समझते हैं।

लेख का पहला चित्र एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तक, *क्षितिज* भाग दो से साभार।

## सन्दर्भ


पाठ्यपुस्तक, *क्षितिज* भाग दो, एनसीईआरटी (2020), नई दिल्ली।


---


शचीन्द्र आर्य ने दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग (सीआईई) से 'ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में आधुनिकता और शिक्षा की अन्तर्क्रिया' विषय पर शोध कार्य किया है। आपके *'ईपीडब्लू', 'शिक्षा विमर्श'* और *'पाठशाला भीतर और बाहर'* में शोध लेख प्रकाशित हुए हैं। शचीन्द्र की कहानियाँ और कविताएँ साहित्यिक पत्रिकाओं *हंस, पहल, वागर्थ* और *समकालीन भारतीय साहित्य* आदि में प्रकाशित हुई हैं।

सम्पर्क : shachinderarya@gmail.com